झारखंड उच्च न्यायालय रांची

द्वितीय अपील संख्या० 13 of 2024

अर्जुन साहू, उम्र लगभग 77 वर्ष, पिता स्वर्गीय फौदारी साहू, निवासी ग्राम पेठियाटांड, पचंबा, डाकघर -गिरिडीह टाउन, जिला-गिरिडीह

.....वादी/अपीलकर्ता

-बनाम-

1. शंकर साव
2. राजेंद्र साव उर्फ शिव शंकर साव,
3. सुरेश साव,
4. नंद किशोर साहू
5. मनोज साहू
6. रंजीत साहू
7. संतोष कुमार

   क्रमांक 1 से 7 सभी पुत्र स्वर्गीय भुनेश्वर साहू, निवासी ग्राम-सलैया, डाकघर -तिकलातो, थाना-पचम्बा, जिला-गिरिडीह
8. उर्मिला देवी, पति - प्रयाग साहू, निवासी ग्राम-दुमका रोड पेट्रोल पंप, डाकघर+थाना - जामताड़ा जिला-जामताड़ा
9. प्रेमा देवी, पति - देवेन्द्र साव, निवासी बाटा मोड़, नियर महावीर मंदिर झरिया, डाकघर+थाना- झरिया, जिला-धनबाद
10. अंजना देवी, पति - राजेश साव, निवासी झरिया नंबर 04 मातृ सदर अस्पताल के सामने (शक्ति मेडिकल हॉल) डाकघर+थाना- झरिया, जिला धनबाद.
11. सरिता देवी, पति - अशोक साव, निवासी पचगराही बाजार, कतरास, डाकघर -कटरा जिला-धनबाद .....प्रतिवादी

कोरम: माननीय कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश

अपीलकर्ता की ओर से : सुश्री संजय कुमार तिवारी, अधिवक्ता

प्रतिवादियों की ओर से : कोई नहीं

<u>आदेश संख्या 4/ दिनांक: 12 मार्च 2024</u>

सिविल अपील संख्या 27/2016 में पारित दिनांक 13 अक्टूबर 2023 के निर्णय और दिनांक 2 दिसंबर 2023 के आदेश से व्यथित होकर, जिसके तहत निचली

अपीलीय अदालत ने टाइटल सूट संख्या 73/2004 में दिनांक 30 अगस्त 2016 के निर्णय और दिनांक 14 सितंबर 2016 के आदेश की पुष्टि की थी, अपीलकर्ता ने वर्तमान द्वितीय अपील दायर की है।

2. अर्जुन साहू द्वारा मौजा सलैया थाना, गिरिडीह (एम) के खाता संख्या 10 के अंतर्गत प्लॉट संख्या 36 में निहित विषय संपत्ति पर स्वामित्व की घोषणा और उसके कब्जे की पुष्टि के लिए शीर्षक वाद संख्या 73/2004 दायर किया गया था। वादी ने दलील दी कि विषय संपत्ति खेवट संख्या 2 में सर्वे खतियान में बकास्त भूमि के रूप में दर्ज थी और पामचंबा के सीताराम और जगरनाथ खेतान के पास उपभोग बंधक के अधीन थी। उक्त बंधक के आत्मसमर्पण पर, पूर्व जमींदार उम्मेद नारायण सिंह और बंधककर्ता के बीच आपसी समझौते के आधार पर 27 जुलाई 1938 को राजमाता मंदाकिनी देवी के पक्ष में पंजीकृत बिक्री विलेख निष्पादित किया गया था। बाद में, बीबी हसीदन और अन्य ने भी खाता संख्या 36 के अंतर्गत भूमि आत्मसमर्पण कर दी 10 सीताराम और जगरनाथ खेतान को दिया गया, जिन्होंने बदले में जमींदार की सहमति से बिशुन सिंह के पक्ष में 15 डेसीमल जमीन का बंदोबस्त किया। वादी ने आगे दलील दी है कि जमींदार ने बिशुन सिंह के बंदोबस्त और कब्जे को मान्यता दी और राज्य में जमींदारी के निहित होने के बाद, बिशुन सिंह को किराए की रसीदें दी गईं और उनका नाम रजिस्टर-II में दर्ज किया गया। वादी के अनुसार, बिशुन सिंह प्रतिवादी और पूरी दुनिया के ज्ञान के लिए विषय संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे में रहे और उन्होंने प्रतिकूल कब्जे के अपने अधिकार को भी पूरा किया।

3. वादी द्वारा यह मामला प्रस्तुत किया गया है कि बिशुन सिंह ने दिनांक 3 दिसंबर 1996 और 6 दिसंबर 1996 को पंजीकृत विक्रय विलेखों के आधार पर 15 डिसमिल भूमि को अपने पक्ष में स्थानांतरित कर लिया और वह विषयगत संपत्ति पर शांतिपूर्ण कब्जे में आ गया। हालांकि, मार्च 2004 में, प्रतिवादी ने विषयगत संपत्ति पर अवैध रूप से कुछ सामग्री गिरा दी और पक्षों के बीच विवाद की पुलिस द्वारा जांच की गई। सब डिविजनल मजिस्ट्रेट, गिरिडीह को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, जिसके बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत कार्यवाही शुरू की गई। उक्त कार्यवाही में, प्रतिवादी ने कुछ दस्तावेज प्रस्तुत किए, जिसमें दावा किया गया कि उनकी मां सहोदरी देवी को मौजा सलैया में खाता संख्या 10 के अंतर्गत 60 डिसमिल जमीन का बंदोबस्त पूर्व

जमींदार द्वारा दिया गया था। वादी ने उन दस्तावेजों पर विवाद किया और दावा किया कि वे एंटी-डेट और फर्जी दस्तावेज थे और सहोदरी देवी के पक्ष में कोई किराया रसीद जारी नहीं की गई थी।

4. वादपत्र के कथनों का खंडन करते हुए प्रतिवादी ने लिखित बयान दाखिल कर ढेर सारी आपत्तियां उठाईं। प्रतिवादी के अनुसार खाता संख्या 10 के अंतर्गत प्लाट संख्या 36 में भूतपूर्व जमींदार की लगभग 10 एकड़ गैर-मजरुआ भूमि शामिल थी, जो खेवट संख्या 1 के अंतर्गत बकास्त भूमि के रूप में दर्ज थी। भूतपूर्व जमींदार उम्मेद नारायण सिंह ने खाता संख्या 10 के प्लाट संख्या 36 में 60 डिसमिल भूमि अपनी मां सहोदरी देवी के पक्ष में सलामी देकर बंदोबस्त कर दी। प्रतिवादी ने आगे दलील दी कि उम्मेद नारायण सिंह ने सहोदरी देवी के पक्ष में विषयगत संपत्ति के बंदोबस्त के प्रतीक के रूप में 9 अगस्त 1942 को उनके नाम से रैयती हुकुमनामा जारी किया और तब से सहोदरी देवी उस पर शांतिपूर्ण भौतिक कब्जे में थीं और वह किराया भी देती रहीं, जिसके लिए किराए की रसीदें विधिवत जारी की गईं। बिहार राज्य में जमींदारी के निहित होने के बाद, पूर्व जमींदार ने खाता संख्या 10 की जमीनों के संबंध में रैयतों के नाम दिखाते हुए रिटर्न दाखिल किया और उस आधार पर मुआवजा वाद संख्या 1781/1955-56 खोला गया। प्रतिवादी ने दावा किया कि राजमाता मंदाकिनी देवी द्वारा दाखिल रिटर्न की क्रम संख्या 23 पर, उम्मेद नारायण सिंह द्वारा बंदोबस्त की गई 60 डेसीमल जमीन के संबंध में हुकुमनामा की पुष्टि करते हुए उनकी मां का नाम दर्ज है। प्रतिवादी ने आगे दलील दी कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत कार्यवाही में यह बात रिकॉर्ड में लाई गई कि उन्होंने प्लॉट संख्या 36 में 15 डेसीमल मापने वाली वाद संपत्ति पर घर, खलियान और आंगन का निर्माण किया था, जिस पर वादी द्वारा गलत दावा किया गया था। यहां तक कि न्यायालय द्वारा नियुक्त प्लीडर कमिश्नर ने भी रिपोर्ट दी कि प्रतिवादी वाद संपत्ति पर काबिज था पक्षों की दलीलों के आधार पर, निम्नलिखित मुद्दों को निर्धारित करने के लिए तैयार किया गया:

I) क्या वाद संधारणीय है?

II) क्या वादी के पास वाद दायर करने के लिए वैध कारण है?

III) क्या वादी के पास वाद वाली भूमि पर कोई स्वामित्व और कब्ज़ा है?

IV) क्या सीता राम खेतान और जगरनाथ खेतान को खाता संख्या 10

की भूमि का बंदोबस्त करने का अधिकार है?

V) क्या वाद वाली भूमि बिशुन सिंह को बंदोबस्त की गई थी?

VI) क्या बिशुन सिंह वाद वाली भूमि के मालिक थे?

VII) क्या 03.12.1996 और 06.12.1996 की बिक्री विलेख कानूनी, वैध और वादी पर बाध्यकारी हैं?

VIII) क्या वादी किसी अन्य राहत या राहत का हकदार है जैसा कि उसने दावा किया है?

5. मुकदमे में वादी ने दस गवाहों की जांच की और खुद पीडब्लू 6 के रूप में साक्ष्य पेश किया। उन्होंने एडवोकेट कमिश्नर की रिपोर्ट एक्सटेंशन-I, गिरिडीह (टी) थाना केस नंबर 43 ऑफ 2002 की केस डायरी एक्सटेंशन 2, किराया रसीदें एक्सटेंशन 3, 3/ए, 3/बी, 4 और किराया रसीद की सत्यापित प्रति एक्सटेंशन 4/ए, पंजीकृत बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति एक्सटेंशन 5, 5/ए, 5/बी, 5/सी और केस नंबर 2/ 2004, केस नंबर 3/2004, विविध केस नंबर 13/ 2007-08 में पारित आदेशों की प्रमाणित प्रतियां, पुलिस रिपोर्ट, सर्कल अधिकारी की रिपोर्ट, रजिस्टर II की प्रमाणित प्रति और कई अन्य दस्तावेज जैसे दस्तावेजी साक्ष्य भी रखे। वादी के दावे को विवादित करने के लिए अपने मामले के समर्थन में चार अन्य गवाहों को पेश करने के अलावा, प्रतिवादी ने सरकारी किराया रसीदें, नगरपालिका कर रसीद, जमींदारी मुआवजा केस संख्या 1781/1956 की प्रमाणित प्रति, आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 03/2005 में पारित आदेश, विविध केस संख्या 83/2008, कबूलियत पट्टा की प्रमाणित प्रति आदि जैसे कई दस्तावेजी साक्ष्य भी पेश किए हैं।

6. ट्रायल जज ने मुद्दा संख्या 5, 6 और 7 पर विचार किया जो मुख्य रूप से बिशुन सिंह के पक्ष में खाता संख्या 10 में भूमि के बंदोबस्त और वादी के पक्ष में उनके द्वारा बिक्री विलेखों के निष्पादन के संबंध में हैं। ट्रायल जज ने पाया कि वादी बिशुन सिंह द्वारा 3 दिसंबर 1996 और 6 दिसंबर 1996 की बिक्री विलेखों के निष्पादन को वैध साबित नहीं कर सका और उसने रिटर्न या जमींदारी किराया रसीद के रूप में कोई सबूत पेश नहीं किया, जबकि प्रतिवादी ने एक्सटेंशन ए से ए/3 और बी से बी/7 के माध्यम से ऐसे दस्तावेज पेश किए। ट्रायल जज ने आगे दर्ज किया कि 5 अप्रैल 2007 की सर्वेक्षण आयुक्त की रिपोर्ट भी प्रथम दृष्टया प्रतिवादी के दावे का समर्थन करती है, कि वह विषय संपत्ति पर कब्जा कर रहा था। ट्रायल जज ने प्रतिवादी के इस रुख

को स्वीकार कर लिया कि वादी ने राजमाता मंदाकिनी देवी द्वारा प्रस्तुत रिटर्न में प्रक्षेप किया था और उक्त दस्तावेज में छेड़छाड़ करके बिशुन सिंह का नाम दर्ज किया गया था।

7. विद्वान ट्रायल जज ने इस प्रकार माना:

"10... पूर्व जमींदार राजमाता मंदाकिनी देवी द्वारा प्रस्तुत मुआवजा वाद संख्या 1981/55-56 (रिटर्न) की प्रमाणित प्रति पूर्व जमींदार की भूमि के बंदोबस्त के संबंध में एक महत्वपूर्ण एवं मूल्यवान दस्तावेज है तथा उक्त दस्तावेज के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि क्रमांक 30 में काली देवी का नाम अंकित है तथा क्रमांक 23 में सहोदरी देवी का नाम अंकित है,इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वादी ने धारा 144 सी.आ.रपी.सी के तहत एसडीएम, गिरिडीह (एक्सटेंशन 8ए) की प्रति के समक्ष दायर वाद में श्रीमती काली देवी का नाम छोड़ दिया है तथा उक्त नाम पर सफेद कागज चिपकाकर बिशुन सिंह का नाम दर्ज करवाकर जालसाजी एवं कूटरचना की है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मौजा सलैया, जिला के खाता संख्या 10 प्लाट संख्या 36 की भूमि। गिरिडीह जो कि ऋणग्रस्त संपत्ति के प्रबंधक टिकैत उम्मेद नारायण सिंह के नाम पर सीताराम खेतान और जगरनाथ खेतान के पास उपभोक्ता बंधक के रूप में दर्ज है, लेकिन उक्त जमीन को पूर्व जमींदार को सौंप दिया गया है और बंधककर्ता ने उक्त जमींदार की सहमति से मंदाकिनी देवी (एक्सटेंशन 5ए) के पक्ष में दिनांक 27.07.1938 को बिक्री विलेख पंजीकृत किया है। इस प्रकार, टिकैत उम्मेद नारायण सिंह ने उक्त खाता संख्या 10 का अपना स्वामित्व खो दिया है, जिससे खेतान बंधुओं ने पंजीकृत विलेख दिनांक 11.09.1934 (एक्सटेंशन 6) के माध्यम से मोस्ट हसीदन और मोहम्मद नसीद से तीन बीघा यानी 2.30 एकड़ जमीन प्राप्त कर ली। इसलिए, मुद्दा संख्या 4 को दोनों पक्षों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है और उक्त मुद्दे पर विवाद नहीं किया है

11. शेष मुद्दे अर्थात मुद्दा संख्या I, II, III और VIII को एक साथ जोड़ दिया गया है क्योंकि वे मुद्दों से संबंधित हैं और उपरोक्त चर्चा के आधार पर अदालत की राय है कि वादी द्वारा मुकदमा दायर करने में कोई कार्रवाई का कारण नहीं है क्योंकि उसके पास मुकदमे की भूमि पर कोई शीर्षक और कब्जा नहीं है और इसलिए वह दावा के अनुसार कोई राहत पाने का हकदार नहीं है और इस प्रकार, मुकदमा वादी के पक्ष में बनाए रखने योग्य नहीं है।

आदेश

तदनुसार, मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं है और वादी के पक्ष में निष्पादित नहीं होने के कारण लागत के बिना खारिज किया जा सकता

है। तदनुसार, प्रतिवादी के पक्ष में और वादी के खिलाफ डिक्री तैयार की जा सकती है।

8. टाइटल सूट संख्या 73/2004 में दिनांक 30 अगस्त 2016 को दिए गए निर्णय और 14 सितंबर 2016 को हस्ताक्षरित उस पर तैयार डिक्री को सिविल अपील संख्या 27/2016 के तहत अपील में लिया गया। इस अपील के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी भुनेश्वर साव का निधन हो गया और उनके कानूनी उत्तराधिकारियों को दिनांक 10 जनवरी 2018 के आदेश के तहत प्रतिस्थापित किया गया।

9. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री संजय कुमार तिवारी ने निचली अपीलीय अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों का हवाला देते हुए कहा कि सिविल अपील संख्या 27/2016 में दिया गया निर्णय रद्द किया जाना चाहिए क्योंकि इस निर्णय के लिए कोई कारण नहीं बताया गया है कि वादी मुकदमे की भूमि पर अपना स्वामित्व साबित नहीं कर सका। इस दलील के समर्थन में, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने "मंजुला एवं अन्य बनाम श्यामसुंदर एवं अन्य" (2022) 3 एस.सी.सी 90 में दिए गए निर्णय का हवाला दिया जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 31 का अनुपालन न करने पर निर्णय और डिक्री अस्थिर हो जाएगी।

10. "मंजुला" में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णय दिया:

> "8. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में "सीपीसी") की धारा 96 मूल अधिकार क्षेत्र की अदालत द्वारा पारित डिक्री के विरुद्ध अपील दायर करने का प्रावधान करती है। आदेश 41 नियम 31 सीपीसी अपील पर निर्णय लेने के लिए अपीलीय अदालत को दिशा-निर्देश प्रदान करता है। यह नियम यह अनिवार्य करता है कि अपीलीय अदालत के निर्णय में निम्नलिखित बातें बताई जाएँ:
>
> (क) निर्धारण के लिए बिंदु;
>
> (ख) उस पर निर्णय;
>
> (ग) निर्णय के कारण; और
>
> (घ) जहाँ अपील की गई डिक्री को उलट दिया जाता है या उसमें परिवर्तन किया जाता है, वहाँ अपीलकर्ता को राहत का अधिकार है।
>
> इस प्रकार, अपीलीय अदालत के पास ट्रायल कोर्ट के निष्कर्षों को उलटने या पुष्टि करने का अधिकार है। यह स्थापित कानून है कि अपील मूल कार्यवाही की निरंतरता है। अपीलीय अदालत के अधिकार क्षेत्र में कानून के साथ-साथ तथ्य के प्रश्नों पर अपील की पुनः सुनवाई शामिल है। प्रथम अपील एक मूल्यवान अधिकार है, और उस स्तर पर, ट्रायल कोर्ट द्वारा तय किए गए तथ्य और कानून के सभी प्रश्न पुनर्विचार के लिए खुले हैं। इसलिए, अपीलीय न्यायालय के निर्णय में सचेत रूप से विचार किया जाना चाहिए और सभी मुद्दों के संबंध में अपने निर्णय के लिए कारणों द्वारा

समर्थित न्यायालय के निष्कर्षों को दर्ज करना चाहिए, साथ ही पक्षों द्वारा प्रस्तुत और दबाए गए तर्कों को भी दर्ज करना चाहिए। कहने की जरूरत नहीं है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय को आदेश 41 नियम 31 सीपीसी की आवश्यकताओं का पालन करना आवश्यक है और इन आवश्यकताओं का पालन न करने से निर्णय में कमजोरी आती है।"

11. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 31 के प्रावधानों के बावजूद, यह द्वितीय अपील टिक नहीं सकती, क्योंकि इसमें मात्र तकनीकी दलील के आधार पर कोई महत्वपूर्ण कानूनी प्रश्न तैयार करने की आवश्यकता नहीं है।

12. यह दूसरी अपील सिविल अपील संख्या 27/2016 के फैसले को चुनौती देने की मांग करती है जो टाइटल सूट संख्या 73/2004 के फैसले और उस पर तैयार डिक्री की पुष्टि करती है। इस तथ्य का एक समवर्ती निष्कर्ष है कि अपीलकर्ता जो वादी था, विषयगत संपत्ति पर अपना अधिकार, शीर्षक और हित स्थापित नहीं कर सका। "गुरन दित्ता बनाम टी. राम दित्ता ए.आई.आर 1928 पीसी 172 (धारा 110 सीपीसी के संदर्भ में जिसे संशोधन अधिनियम,1973 द्वारा हटा दिया गया था) में प्रिवी काउंसिल ने माना कि "कानून का पर्याप्त प्रश्न" वाक्यांश का अर्थ सामान्य महत्व का पर्याप्त प्रश्न नहीं है बल्कि कानून का एक पर्याप्त प्रश्न है जो पक्षकारों के बीच मामले में शामिल है। "सर चुन्नीलाल बनाम मेहता एंड संस लिमिटेड बनाम सेंचुरी स्पिनिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड" ए.आई.आर 1962 एससी 1314 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परीक्षण निर्धारित किया और "कानून का महत्वपूर्ण प्रश्न" की व्याख्या इस प्रकार की:

> "6. हम मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सामान्य रूप से सहमत हैं और हमें लगता है कि बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संकीर्ण है, जबकि नागपुर के पूर्व उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण बहुत व्यापक है। यह निर्धारित करने के लिए उचित परीक्षण कि क्या मामले में उठाया गया कानून का प्रश्न सारवान है, हमारी राय में, यह होगा कि क्या यह सामान्य सार्वजनिक महत्व का है या क्या यह सीधे और, सारवान रूप से पक्षों के अधिकारों को प्रभावित करता है और यदि ऐसा है तो क्या यह इस अर्थ में एक खुला प्रश्न है कि यह इस न्यायालय या प्रिवी काउंसिल या संघीय न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से तय नहीं किया गया है या यह कठिनाई से मुक्त नहीं है या वैकल्पिक विचारों की चर्चा की मांग करता है। यदि

प्रश्न उच्चतम न्यायालय द्वारा तय किया जाता है या प्रश्न को निर्धारित करने में लागू किए जाने वाले सामान्य सिद्धांत अच्छी तरह से तय किए गए हैं और उन सिद्धांतों को लागू करने का केवल एक सवाल है या उठाया गया तर्क स्पष्ट रूप से बेतुका है तो प्रश्न कानून का सारवान प्रश्न नहीं होगा।

7.इन परीक्षणों को लागू करने पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि इस अपील में शामिल प्रश्न, यानी प्रबंध एजेंसी समझौते का निर्माण न केवल कानून का है, बल्कि यह न तो सरल है और न ही संदेह से मुक्त है। इन परिस्थितियों में हमें यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को यह प्रमाणपत्र देने से इनकार करके गलती की है कि अपील में कानून का एक महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल है। यह ध्यान में रखना होगा कि पक्षों के तर्क की सफलता या विफलता पर वे लगभग 28 लाख रुपये के अपने दावे के संबंध में सफल या असफल हो सकते हैं।"

13. "संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम तिवारी" (2001) 3 एससीसी 179 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि विधि का कोई ऐसा बिन्दु, जिसमें दो मतों की अनुमति न हो, विधि का प्रस्ताव तो हो सकता है, लेकिन विधि का कोई सारवान प्रश्न नहीं हो सकता।

14. "संतोष हजारी" मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार से कहा:

"14. विधि का कोई ऐसा प्रश्न जो दो मतों को स्वीकार न करता हो, विधि का प्रस्ताव तो हो सकता है, लेकिन विधि का सारवान प्रश्न नहीं हो सकता। "सारवान" होने के लिए विधि का प्रश्न बहस योग्य होना चाहिए, देश के कानून या बाध्यकारी मिसाल द्वारा पहले से तय नहीं होना चाहिए, और मामले के निर्णय पर इसका भौतिक प्रभाव होना चाहिए, यदि किसी भी तरह से उत्तर दिया जाए, जहाँ तक कि पक्षकारों के अधिकारों का संबंध है। "मामले में शामिल विधि का प्रश्न" होने के लिए सबसे पहले दलीलों में इसके लिए एक आधार होना चाहिए और यह प्रश्न तथ्यों के न्यायालय द्वारा प्राप्त तथ्यों के स्थायी निष्कर्षों से उभरना चाहिए और मामले के न्यायोचित और उचित निर्णय के लिए विधि के उस प्रश्न का निर्णय करना आवश्यक होना चाहिए। उच्च न्यायालय के समक्ष पहली बार उठाया गया एक बिल्कुल नया मुद्दा मामले में शामिल प्रश्न नहीं है जब तक कि यह मामले की जड़ तक न जाए। इसलिए, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा कि कानून का प्रश्न सब्स्टन्सिअल है और मामले में शामिल है या नहीं; सर्वोपरि समग्र

विचार यह है कि सभी चरणों में न्याय करने के अपरिहार्य दायित्व और किसी भी लिस के जीवन में विस्तार से बचने की अनिवार्य आवश्यकता के बीच एक विवेकपूर्ण संतुलन बनाने की आवश्यकता है।

15. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत इस न्यायालय द्वारा अधिकारिता के प्रयोग के लिए अपीलकर्ता द्वारा कानून के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रश्न तैयार किए गए हैं:

> "A. क्या विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XLI नियम 31 के तहत उसे दिए गए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग न करके विधि की त्रुटि की है, जबकि उसने निर्णय के लिए कोई कारण बताए बिना विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों से सहमति जताई है?
>
> B. क्या विद्वान अपीलीय न्यायालय ने विधि का न्यायालय होने के नाते और तथ्यों को संबोधित किए बिना अपील पर निर्णय लेने में विधि की त्रुटि की है, बिना किसी निर्धारण बिंदु को तैयार किए या मुद्दे के अनुसार भी निर्णय लिया है?
>
> C. क्या विद्वान अपीलीय न्यायालय द्वारा मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य दर्ज किए बिना भी निर्णय पारित करने का औचित्य था, क्या निष्कर्ष विधि की दृष्टि में कायम रखा जा सकता है?
>
> D. क्या निचली अदालतों द्वारा पारित विवादित निर्णय और डिक्री को कायम रखा जा सकता है, खासकर तब जब उन्होंने प्रतिवादियों के शीर्षक का निर्णय करते हुए विधि के गलत सिद्धांतों को लागू किया हो?
>
> E. क्या वादी द्वारा दलीलों का समर्थन करने वाले साक्ष्य पर विचार न किए जाने पर, निर्णय और डिक्री को विधि की दृष्टि में कायम रखा जा सकता है?
>
> F. अपीलकर्ता सुनवाई के समय कानून के अन्य और महत्वपूर्ण प्रश्न तैयार करने के लिए माननीय न्यायालय से अनुमति चाहता है?

16. अपीलीय न्यायालय ने 19 पृष्ठों में विस्तृत निर्णय देते हुए कहा कि टाइटल सूट संख्या 73/2004 में दिया गया निर्णय तथा सिविल जज (वरिष्ठ प्रभाग)-IV द्वारा पारित डिक्री लागू कानूनों के अनुरूप है तथा वैध है। अपीलीय न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत मामले तथा मुकदमे के दौरान प्रस्तुत साक्ष्यों का संदर्भ दिया। अपीलीय न्यायालय द्वारा तथ्यों की रिकॉर्डिंग इतने विस्तृत रूप से की गई है कि निर्णय में

प्रत्येक छोटे तथ्य को भी दर्ज किया गया है। दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर भी बहुत विस्तार से विचार किया गया है। हालांकि, 13 अक्टूबर 2023 के निर्णय के पैराग्राफ संख्या 10 मे निचली अपीलीय न्यायालय द्वारा निष्कर्षों को दर्ज करने का यह तरीका आलोचना को आकर्षित करता है; कानून की आवश्यकताओं के अनुसार दर्ज नहीं किया गया है।

17. सिविल अपील संख्या 27/2016 में निचली अपीलीय अदालत ने निम्नलिखित निष्कर्ष दर्ज किए:

> "10. मामले के अभिलेख को सुना और पढ़ा। इसके अवलोकन से पता चलता है कि दोनों पक्ष मुकदमे की भूमि पर अपना स्वामित्व दावा कर रहे हैं। वादी के अनुसार उन्होंने पंजीकृत विलेखों के माध्यम से स्वामित्व प्राप्त किया जबकि प्रतिवादी ने हुकुमनामा के माध्यम से अधिग्रहण किया। मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के अवलोकन से मुझे पता चलता है कि वादी मुकदमे की भूमि पर अपना स्वामित्व साबित नहीं कर सका जबकि प्रतिवादी ने अपनी दलीलों के समर्थन में ठोस मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पेश करके मुकदमे की भूमि पर अपना स्वामित्व साबित करने में सफलता प्राप्त की है। इसके अलावा, मुझे लगता है कि निचली अदालत ने दोनों पक्षों द्वारा अपनी दलीलों के समर्थन में पेश किए गए साक्ष्य की सही ढंग से सराहना की है और निचली अदालत द्वारा पारित टाइटल सूट संख्या 73/2004 को सही ढंग से खारिज कर दिया है। इसलिए निचली अदालत ने उचित परिप्रेक्ष्य में रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य पर विचार और विश्लेषण किया है और निष्कर्ष पर पहुंचते समय निचली अदालत ने कोई अवैधता नहीं की है इसलिए यह कानून के अनुसार है।
>
> **आदेश**
>
> 11. उपर्युक्त चर्चाओं और पूर्वगामी पैराग्राफ में प्राप्त निष्कर्षों के मद्देनजर मैं यह पाता हूं और मानता हूं कि टाइल सूट संख्या 73/2004 में विद्वान सिविल जज (सीनियर डिविजन)-IV, गिरिडीह की अदालत द्वारा पारित दिनांक 30.08.2016 का निर्णय और डिक्री तथा दिनांक 14.09.2016 का निर्णय कानून के अनुसार है, इसलिए इसे बरकरार रखा जाता है। तदनुसार वर्तमान अपील खारिज की जाती है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं। कार्यालय को निर्देश दिया जाता है कि वह निर्णय की प्रति के साथ ट्रायल कोर्ट का रिकॉर्ड वापस करे।

18. निचली अदालत द्वारा अभिलेखों में छेड़छाड़ और जालसाजी का स्पष्ट निष्कर्ष है और इस निष्कर्ष की निचली अपीलीय अदालत ने पुष्टि की है।

अपीलकर्ता का पूरा दावा राजमाता मंदाकिनी देवी द्वारा जमींदारी मुआवजा केस संख्या 1781/1956 में एक्सटेंशन सी के माध्यम से दाखिल रिटर्न पर आधारित है। अपीलकर्ता ने यह प्रदर्शित करके इस निष्कर्ष को संबोधित नहीं किया कि निचली अदालत ने प्रतिवादी की मां सहोदरी देवी के नाम पर एक सफेद कागज चिपकाकर एक्सटेंशन सी में छेड़छाड़/छेड़छाड़ के बारे में निष्कर्ष पर पहुंचने में गलती की थी। अब निचली अपीलीय अदालत जो कर सकती थी, वह केवल पक्षों की दलीलों और उनके द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों को पुन: प्रस्तुत करना था, जो पहले से ही अपीलीय निर्णय के पिछले पैराग्राफ में दर्ज थे। यह न्यायाधीश द्वारा निर्णय लिखने में की गई हर गलती नहीं है जो सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने को आमंत्रित करेगी। विधि का कोई सब्स्टन्सिअल प्रश्न मात्र शैक्षिक उद्देश्यों के लिए तैयार नहीं किया जाना चाहिए। पक्षों के बीच उठने वाला विधि का कोई सब्स्टन्सिअल प्रश्न ऐसे मुद्दे से संबंधित होना चाहिए जिस पर निर्णय पक्षों के बीच विवाद को निर्णायक रूप से तय करेगा।

19. द्वितीय अपील की सुनवाई करने का उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र "मामले में शामिल विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न" तक सीमित है। इसलिए अपीलकर्ता का यह दायित्व है कि वह अपील में शामिल विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न(ओं) को तैयार करे या उच्च न्यायालय के समक्ष जो प्रस्तावित किया जाना है, उसे तैयार करे। कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि प्रारंभिक सुनवाई के समय पक्षकार विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न(ओं) का प्रस्ताव कर सकते हैं, जिसे उच्च न्यायालय रिकॉर्ड कर सकता है और द्वितीय अपील की सुनवाई के लिए आगे बढ़ सकता है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि उच्च न्यायालय की किसी भी महत्वपूर्ण विधि प्रश्न पर अपील की सुनवाई करने की शक्ति, जो उसके द्वारा पहले तैयार की गई थी और नहीं तैयार की गई थी, के अलावा दो शर्तों के अधीन नहीं छीनी जाती है कि (i) उच्च न्यायालय संतुष्ट है कि मामले में ऐसा प्रश्न शामिल है और (ii) उच्च न्यायालय अपनी ऐसी संतुष्टि के लिए कारण रिकॉर्ड करता है। इसलिए, उच्च न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि मामले में विधि का महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल है और ऐसा प्रश्न तब उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किया जाना चाहिए। इस द्वितीय अपील के ज्ञापन में, अपीलकर्ता द्वारा तैयार किए गए विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न केवल विधि के प्रश्न हैं। सुनवाई के समय भी अपीलकर्ता के विद्वान

वकील निचली अपीलीय अदालत द्वारा साक्ष्य की सराहना या प्रक्रियात्मक अवैधता में कोई त्रुटि नहीं दर्शा सके।

20. निचली अदालतों द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, यह अदालत पाती है कि इस मामले में कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं उठता है और, तदनुसार, द्वितीय अपील संख्या 13/2024 को खारिज किया जाता है।

(न्यायमूर्ति श्री चंद्रशेखर, ए.सी.जे.)

Sudhir/Tanuj
AFR

यह अनुवाद सुश्री लीना मुखर्जी, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।